चन्दामामा

माँ-बच्चों का मासिक पत्र





मालव देश में एक राजा था। उसका नाम था पुरुषोत्तम। राजा का हृदय बहुत ही कोमल था। वह अपनी सन्तान की तरह प्रजा का पालन करता था। उसके सद्‌गुणों से प्रसन्न होकर प्रजा सचमुच ही उसे पुरुषोत्तम मानने लगी। पुरुषोत्तम का अर्थ तुम जानते ही हो। जो मनुष्य सबसे उत्तम यानी अच्छा हो वह ही पुरुषोत्तम कहा जाता है।

एक बार पुरुषोत्तम ने सोचा कि देश के सभी तीर्थों का दर्शन कर आना चाहिए। इस विचार से उसने अपना राज मन्त्रियों को सौंप दिया और पुरोहित को साथ लेकर तीर्थ यात्रा करने निकल पड़ा। सभी सुप्रसिद्ध तीर्थों के दर्शन करते हुए वे एक विचित्र प्रदेश में जा पहुँचे। उस देश में मकान ही मकान थे। लेकिन उनमें रहने वालों का कहीं पता न था। एक जगह एक बहुत बड़ा बड़ का पेड़ था जो कई कोसों तक फैला हुआ था। उस पेड़ के पास एक सुन्दर मन्दिर बना था। पुरुषोतम ने उस मन्दिर का द्वार खुलवाया। मालूम हुआ कि बरसों से वहाँ पूजा-अर्चा नहीं हुई थी। आश्चर्य चकित होकर उसने मन्दिर के चारों ओर घूम-घूम कर देखा। लेकिन उसे मूर्ति कहीं नहीं दीख पड़ी।

सच बात तो यह थी कि उस मन्दिर में भगवान की मूर्ति थी ही नहीं। इससे उसे और भी अचरज हुआ। पुरुषोत्तम के मन में अनेक सन्देह पैदा हुए। उसने सोचा-"इस मन्दिर में देवता क्यों नहीं हैं ! मकानों में रहने वाले कहाँ गए।" लेकिन उस निर्जन प्रदेश में वह किससे पूछे! अपने सन्देह कैसे दूर करे? यों सोचता यह एक पागल की तरह वहाँ बैठा था कि इतने में एक बूढ़ा उधर से जाता दिखाई दिया। उसे देख कर

वह बहुत खुश हुआ और बोला- "दादा ! तुम किस गाँव में रहते हो ! यह जगह इतनी सुनसान क्यों है ! यह मन्दिर ऐसा क्यों है ? इसमें मूर्ति क्यों नहीं है !"

पुरुषोत्तम की बात सुन कर बूढ़े ने कहा-"बेटा! अगर मैं यहाँ की सारी कहानी तुम्हें सुनाने लग जाऊँ तो बहुत देर हो जाएगी। इससे मेरा भी हर्ज होगा और तुम्हारा भी। इसके सिवा मेरे मन में भी यही संशय हैं। इसलिए भाई, तुम और किसी को ढूँढो।"

उसकी बातें सुन कर पुरुषोत्तम के मन की जिज्ञासा और भी बढ़ गई। उसने बूढ़े से बहुत तरह से कहा सुना।

आखिर बुढा उसकी बात मान गया और में कहने लगा-"बेटा ! तुम्हारा मुँह देखने से मालूम होता है कि तुम किसी ऊँचे घराने के आदमी हो। इसलिए मैं बड़ी खुशी से यहाँ की कहानी तुम्हें सुनाऊँगा। अच्छा तो सुनो ! कभी इस क्षेत्र की बड़ी भारी महिमा थी। जो इस बरगद के नीचे रहता था उसके सब पाप दूर हो जाते थे और वह सब तरह की सम्पदा प्राप्त करते थे। देखो, वहाँ



एक तालाब है न ! कहा जाता है कि उस तालाब में कभी परियाँ नहाया करती थीं। यहाँ बैठ कर तप करने से भगवान विष्णु बहुत शीघ्र प्रसन्न हो जाते थे। उसके उत्तर में ठाकुर-द्वार है। वहीं भगवान के दर्शन करने से स्वर्ग मिल जाता था। एक बार इस महा-महिम प्रदेश में एक विचित्र बात हुई। मैं उस समय हर रोज़ की तरह मन्दिर में बैठा हुआ था कि मुझे बड़े ज़ोर की नींद आई और मैं लेट गया। नींद में मैंने एक सपना देखा। सपने में नारद मुनि आए और बोले-"गुरुबर ! इस पुण्य-देश में अब एक बड़ा भारी परिवर्तन होने पाला है। वजह यह है कि स्वर्ग में ब्रम्हाजी से यह



सवाल किया गया है कि अगर सब लोग स्वर्ग ही पाने लगें तो फिर नरक की क्या जरूरत है ! ब्रम्हाजी इस सवाल का कोई जवाव न दे सके। इसलिए वे सीधे विष्णु के पास गए।

विष्णु ने सब कुछ सुन कर कहा- 'अच्छा जाइए। मैं इसका कोई उपाय सोचूँगा।' बात यहाँ तक आ गई है। तुम भक्त आदमी हो। इसलिए में यह रहस्य तुमसे बता रहा हूँ।" यह कह कर नारद अदृश्य हो गए।

तुरन्त मैंने आस-पास के लोगों से जाकर अपने स्वप्न की बात कह सुनाई। हम सब मिल कर मन्दिर में गए और देखा तो मूर्ति लापता। यह देख कर सब लोग आश्चर्य में डूब गए। मेरे सपने में नारद ने जो कहा, वह इस तरह सत्य साबित हुआ। दूसरे दिन नारद मुझे फिर सपने में दर्शन देकर बोले-"गुरुवर ! आप कुछ सोच न कीजिए। मैं आपको एक उपाय बताता हूँ जिससे भगवान फिर इस मन्दिर में बास करने आ जाएँगे। अगर कोई ऐसा भक्त हो जिसका भगवान में अचल विश्वास हो तो वह तड़के उठे। अकेले पूरब की ओर देखते चलता चले। यों जाने पर मन्दिर के निकट का सरोवर एक भयङ्कर समुन्दर बन जाएगा। उसमें आकाश को चूमने वाली उतुङ्ग तरङ्गें उठ कर भयङ्कर शब्द करने लगेंगी। लेकिन यह देख कर वह भक्त बिल्कुल न डरे और उस सागर में साहस के साथ कूद पड़े। बीच सागर में उसे एक पीपल का पेड़ दिखाई देगा। अगर वह उसकी एक डाल तोड़ ले तो भगवान प्रत्यक्ष होंगे और उसकी सारी इच्छाएँ पूरी कर देंगे। यही एक उपाय है।" यह कई कर नारद अदृश्य हो गए।

यह बृतान्त सुनते ही पुरुषोत्तम के मन में

हलचल मच गई। उसने कहा-"दादा ! मैं अभी जाता हूँ। अनेकों कष्ट झेल कर भगवान को प्रसन्न करूँगा। जब तक वे प्रसन्न होकर फिर इस मन्दिर में प्रवेश न करेंगे तब तक में अन्न-जल तक नहीं छूऊँगा।" पुरुषोत्तम ने प्रतिज्ञा की।

इस पर बूढ़े ने कहा-"बेटा ! बहुत से लोगों ने तुम्हारी ही तरह प्रतिज्ञा की थी। लेकिन सब के सब उस भयङ्कर दृश्य को देख कर डर गए और लौट आए। मैंने भी वहाँ जाने की कोशिश की थी। लेकिन बुढ़ापे के कारण कुछ न हो सका। तब हार कर मैंने नई मूर्तियाँ लाकर इस मन्दिर में प्रतिष्ठित करने की कोशिश की। लेकिन सभी मूर्तियाँ अदृश्य हो गई। एक भी मन्दिर में न टिकी। यह देख कर यहाँ के लोगों ने सोचा कि अब यहाँ रहने से हमारी कुशल नहीं और सब लोग एक-एक करके ये मकान छोड़ कर दूसरी जगह जा बसे। उनको हमने बहुत समझाया, पर कुछ फायदा न हुआ। आखिर मैंने सोचा कि एफ-न-एक दिन कोई वीर यहाँ आएगा और मन्दिर में फिर से मूर्ति की प्रतिष्ठा होगी। इसी आशा से मैं यहाँ रह गया। कहो, अगर में यहाँ न रहता तो तुम्हें यह सारा बृतान्त



कैसे मालूम होता!" बूढ़े ने अपनी कहानी इस तरह खतम की।

यह सुन कर पुरुषोराम और भी जल्दी करने लगा। तब बूढ़े ने एक कुल्हाड़ी लाकर उसे दी और आशीर्वाद देकर उसे बिदा किया। कुल्हाड़ी कन्धे पर रख कर पुरुषोतम वहाँ से निकला। थोड़ी देर में सरोबर उसकी आँखों से ओझल हो गया। उसके बदले गरजता हुआ भयङ्कर सागर दिखाई दिया। उन ऊँची तरङ्गों के बीच एक पीपल का पेड़ भी दिखाई दिया। पुरुषोत्तम भगवान का नाम लेकर लहरों में कूद पड़ा और डूबता-

डूबता पीपल के पेड़ के पास पहुँच गया। वहाँ पहुँचते ही उसने कुल्हाड़ी उठाई। इतने में सूर्य और चन्द्र के समान तेज दो दिव्य पुरुष प्रत्यक्ष हुए और डाँट कर बोले-"तुम कौन हो? क्या चाहते हो ? इस महावृक्ष की डाली को क्यों काट रहे हो?"

पुरुषोत्तम ने साहस के साथ सारी कहानी सुनाई। यह सुन एक ने कहा-"बत्स ! मैं तुम्हारी दीक्षा और भक्ति देख कर बहुत खुश हूँ। देखो! मेरा साथी एक बहुत बड़ा शिल्पी है। तुम जैसी मूर्ति चाहते हो उसे बनाने में यह ही समर्थ है।" यह कह कर वह अन्तर्धान हो गया। पुरुषोतम के देखते ही उस दूसरे पुरुष ने उसकी काटी हुई डाली से तीन सुन्दर मूर्तियाँ बना दी और कहा-“भक्तबर ! ये तीनों मूर्तियाँ भगवान कृष्ण, बलराम और सुभद्रा की हैं। इससे तुम्हारा काम चल जाएगा।" यह कह कर वह भी अदृश्य हो गया।

पुरुषोत्तम उन मूर्तियों की प्रार्थना करने लगा। तब कृष्ण अपने निज रूप में प्रत्यक्ष हुए और बोले-"पुरुषोतम ! मैं तुम्हारी दीक्षा से बहुत पसन्न हूँ ! जाओ! यह क्षेत्र अब तुम्हारे नाम से प्रसिद्ध होगा और जो उस बड़ से नैऋति दिशा के मण्डप में मेरा आवाहन करेगा और आषाढ़ मास के शुक्लपक्ष में पञ्चमी तिथि को मख नक्षत्र में जो सात दिन तक दीक्षा के साथ मेरी पूजा करेगा, उसका पुनर्जन्म न होगा। तुम दस हजार नौ सौ साल तक राज करके अन्त में मुझ में लीन हो जाओगे।" यह कह कर भगवान अदृश्य हो गए।

पुरुषोत्तम ने बड़ी धूम-धाम से उन तीनों मूर्तियों को मन्दिर में प्रतिष्ठित किया। सरोवर पहले जैसा हो गया। सभी लोग फिर वहाँ आकर बसने लगे। उस दिन से हमारे देश के पुण्य क्षेत्रों में पुरुषोत्तमपुरी का नाम परम प्रसिद्ध हो गया।





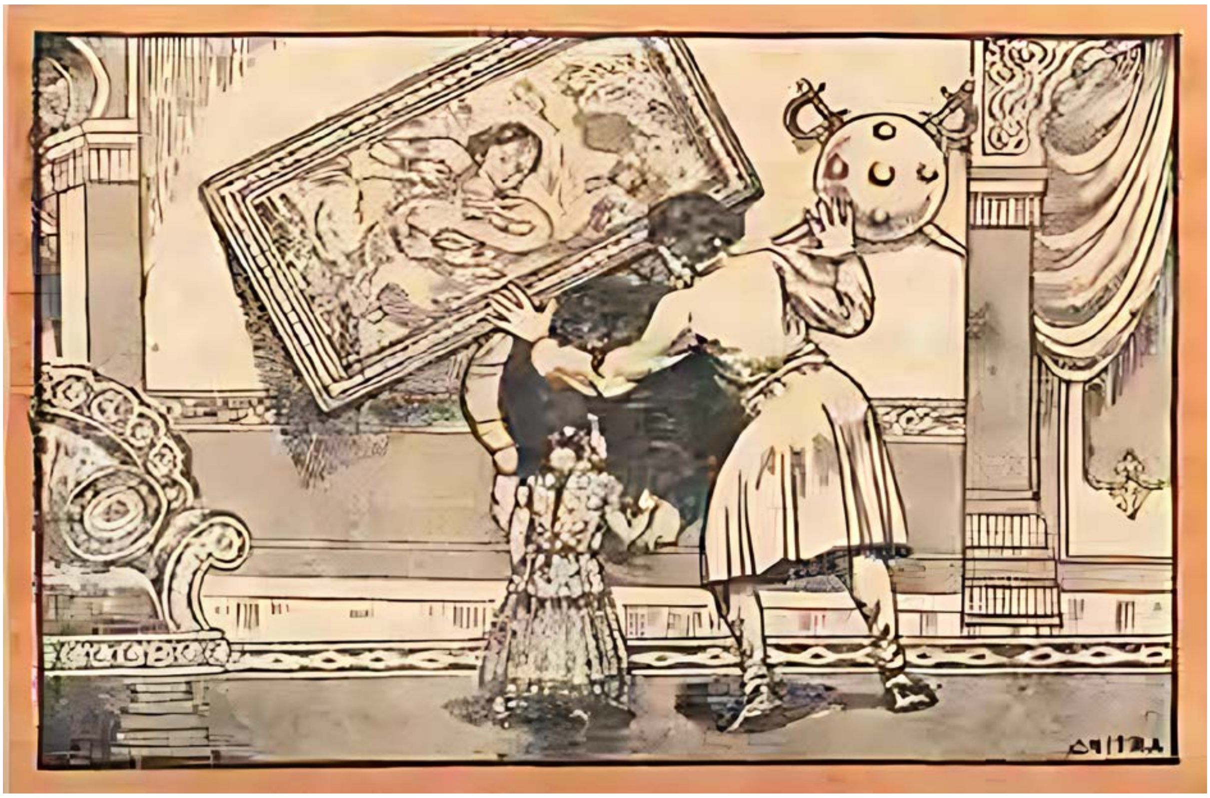
इतने में उसे एक जगह एक दरवाजा दिखाई दिया। वहाँ दासी और सुहासिनी को खड़े देख कर राजा की जान में जान आई। उस दरवाजे के अन्दर जाने पर वे तीनों सुहासिनी के कमरे में पहुँच गए। अन्दर जाने पर मालूम हुआ कि सुहासिनी के सारे कमरे में दीवारों और छत पर भी आइने लगे हुए थे। उन आइनों में एक तो बड़ा अजीब था। जमीन पर एक बटन लगा हुआ था। उसको दबाने पर वह आइना जमीन के अन्दर धँस जाता था और उस जगह एक दरवाजा दिखाई देने लगता था। उस दरवाजे से जाने पर सुरङ्ग की राह दिखाई देती थी। उस दरवाजे के बाहर भी एक बटन लगा हुआ था जिसे दबाने पर वह आइना ऊपर आ जाता और वह दरवाजा बन्द हो जाता था। इस तरह उस दरवाजे को खोलने और बन्द करने के लिए भी बटन लगे हुए थे।

अब प्रश्न यह था कि सुहासिनी राजा के कमरे में कैसे पहुँच गई। वह रोज की तरह दासी के साथ पलङ्ग पर सो रही थी।

लेकिन रात में अचानक उसकी नींद खुल गई। जब वह उठकर कमरे में इधर-उधर टहलने लगी तो उसका पैर दरवाज़ा खोलने वाला बटन पर पद गया।

तुरन्त आइना जमीन में धँस गया और उस जगह एक दरवाजा निकल आया। यह देख कर सुहासिनी उस दरवाजे से बाहर निकली और चलते-चलते राजा के सोने के कमरे में की तस्वीर के नीचे पहुँच गई। वहाँ अन्धेरा था। इसलिए सुहासिनी को मालूम नहीं हुआ कि सुरङ्ग वहीं तक है और आगे पैर बढ़ाने से यह तस्वीर से टकराएगी। ज्यों ही उसने पैर आगे बढ़ाए वह तस्वीर से टकरा गई।

टकराते ही तस्वीर कुछ हटी और उसको राजा पलङ्ग पर सोया हुआ दिखाई दिया। पिता के पास जाने की इच्छा से मुहासिनी ने बड़ी कोशिश से उस तस्वीर को सरका कर घुसने का रास्ता बना लिया और घुस कर राजा के पास पहुँच गई। उसके बाद राजा कैसे सुरङ्ग में भटकने लगा सो तो आप जानते ही हैं।



इस तरह उस विचित्र सुरङ्ग के गुप्त-मार्ग की बात जान कर राजा को बहुत हर्ष हुआ और साथ साथ डर भी लगा।

राजा इतने दिन तक बड़ी मुश्किल से सब की आँख बचा कर बाग की राह से सुरङ्ग में आता जाता था। लेकिन अब उसके लिए उस राह से जाने की कोई जरूरत न थी। अब उसे डर न था कि कोई देख लेगा। वह अब मन होने पर अपने कमरे से इस सुरङ्ग की राह जाकर लड़कियों को देख सकता था और यह किसी को मालूम भी न होता। इसलिए राजा को बहुत हर्ष हुआ।

साथ ही डर लगने का कारण यह था कि ठीक बन्दोबस्त न करने पर आगे सुहासिनी और उसकी दूसरी लड़कियाँ भी सुरङ्ग की राह उसके कमरे में पहुँचा करेंगी और वहाँ से बाहर महल में चली जाएँगी। तब तो उसका किया-कराया सब मिट्टी में मिल जाएगा और लड़कियों आफत में पड़ जरेंगी। इसलिए अब राजा सोचने लगा कि किस उपाय से यह



इस ओर से निशङ्क हो जाए। अन्त में उसे एक अच्छा उपाय सूझ गया।

इसके पहले उसने अपनी तीनों लड़कियों को तीन अलग अलग कमरों में रख कर तीन दासियों को अलग अलग उनकी देख-रेख करने का आदेश दिया था। लेकिन अब सुहासिनी को उस कमरे में रखने से खतरा था। इसलिए राजा ने उस कमरे को खाली करने का निश्चय कर लिया। उसने दासियों से कह दिया कि तीनों लड़कियों को दो ही कमरों में रहने दो। दासियों ने ऐसा ही किया।



तब जाकर राजा निश्चित हुआ। वह थोड़ी देर तक अपनी तीनों लड़कियों से बातें को करके सुहासिनी के आइनों वाले कमरे में गया। बटन दबाते ही आइना जमीन में धँस गया और रास्ता निकल आया। उसे राह से सुरङ्ग में जाकर राजा ने बाहर का बटन जो दवाया तो फिर दरवाजा बन्द हो गया। इस गुप्त मार्ग का पता पा जाने से उसके मन की चिन्ता दूर हो गई। उसने मन ही मन भगवान को धन्यवाद दिया और खुशी खुशी अपने कमरे में लौट आया।

* * * * *

उस दिन से निश्चिन्त होकर राजा दिन में कई बार आने जाने लगा। धीरे धीरे दिन बीतते गए। जब-जब राजा अपनी लड़कियों को देखने आता तो उसकी तीनों लड़कियों बड़े ही दीन स्वर में कहती- "पिताजी! हमें भी अपने साथ महल में के चलिए न !"

लेकिन राजा हँस कर उनकी बात टाल देता था। वह प्यार से कहता- "बिटिया ! अभी नहीं; फिर कभी ले चलूँगा।"

इस तरह कई महीने बीत गए। राजा को बड़ा आनन्द हुआ कि उसकी तीनों लड़कियाँ सुरक्षित हो गई।

लेकिन उधर रानी दिन-दिन चिता में घुली जा रही थी। जो सिपाही लड़कियों की खोज में गए हुए थे, वे अपना सा मुँह लिए लौट आए। अब रानी अकसर ज्योतिषी को बुला कर पूछा करती-"मेरी लड़कियों कुशल से हैं ?"

"उनके लिए आप कुछ भी फिक्र न कीजिए। मुझे पोथी -पत्रों से मालूम होता है कि वे सभी थोड़े दिनों में सकुशल लौट

आवेंगी।" इस तरह ज्योतिषी उसे धीरज बँधाता।

इससे रानी को सन्तोष होता और कुछ दिन तक उसकी चिन्ता जरा घट जाती। इस तरह दो साल बीत गए।

राजा रोज़ सुरङ्ग में जाकर अपनी तीनों लड़कियों को देख आता था। उसकी तीनों

लड़कियाँ सुरक्षित थीं। लेकिन राजा को देखते ही वे हल्ला मचाने लगती "हमें भी अपने साथ लेते चलिए। हमें यहाँ क्यों छोड़े जाते हैं ! माँ को देखे कितने दिन हो गए। हमें माँ के पास क्यों नहीं ले जाते हैं!" यों कह कर वे सब रोने लगती और अधीर होकर पिता के पैरों से लिपट जाती थी।

उनको इस तरह व्याकुल होते देख कर राजा का कलेजा टूक टूक हो जाता था। वह सोचने लगता था- "क्यों न इन्हें एक बार माँ से मिला दूँ। इसमें हर्ज क्या है ? डर तो कुछ है नहीं।" लेकिन उसे ऐसा करने का साहस न होता था। वह निश्चय कर



लेता-"चाहे कुछ भी हो, और एक साल तक मुझे यह सब बर्दाश्त करना ही होगा।" इसलिए लड़कियों के बहुत रोने-धोने पर भी वह उन्हें किसी न किसी तरह राजी कर लेता। मगर अपने साथ न से जाता।

और कुछ महीने बीत गए। यहाँ तक कि ज्योतिषी के कहे मुताबिक सात साल की अवधि पूरी होने पर आई। सिर्फ पाँच-छः रोज में लड़कियाँ सात साल की हो जाती और उनके ऊपर से दुष्ट-प्रहों का प्रभाव दूर हो जाता। तब वे खुशी-खुशी सुरङ्ग से बाहर आ जातीं।



उनका हठ देख कर राजा का मन पानी-पानी हो गया। "तीन साल तो करीब-करीब बीत ही गए। सिर्फ बीस घण्टे की बात है। इतने में ही इन पर कौन सी आपत आ जाएगी ?नौकर-चाकर तो चारों ओर पहरा देते ही रहेंगे।" यह सोच कर राजा ने मन में साहस किया। यह तीनों लड़कियों को सौ नौकरों और तीन दासियों के साथ सुरङ्ग से बाहर बाग में ले आया। दासियों उन्हें घेरे खड़ी थीं और राजा खुद नजदीक ही था। इतने दिनों बाद बाहरी दुनियाँ में आकर लड़कियों की खुशी का ठिकाना न रहा। के बाग में उछलती-कूदती खेलने लगीं। यह देख कर राजा का हृदय आनन्द से भर गया।

इतने में से एक बड़ा भारी बवण्डर वह उठा। देखते-देखते सारा बाग धूल से भर गया। उस धूल-झाड़ में थोड़ी देर के लिए सबों की आँखें बन्द हो गई। जब उन लोगों आँखें खुली तो देखा कि लड़कियाँ आकाश में उड़ी जा रही हैं। तीन गिद्ध

"तीन साल तो बीतने को आए। मैं इस सुरङ्ग के कारण लड़कियों की रक्षा कर सका। अब और क्या है ? चार-पाँच दिनों में तो सात साल पूरे हो ही जाते हैं। तब मेरी लड़कियों के ऊपर कोई सङ्कट न आएगा।" राजा ने अपने मन में सोचा।

रोज़ की ही तरह एक दिन राजा सुरङ्ग के रास्ते लड़कियों को देखने आया। वह दिन सात साल की अवधि का आखरी दिन था। दूसरे दिन के लड़कियाँ सुरङ्ग से बाहर आ जाती। हाँ, उस दिन राजा को देखते ही लड़कियाँ उसके पैरों से लिपट गई और रोकर कहने लगी-"आज अपने साथ हमको भी ले चलिए।"



उन्हें उठाए चले जा रहे हैं। यह देखते ही राजा चिल्ला कर बेहोश हो गया। दासियाँ राजा की सेवा करने लगीं। नौकर उड़ते हुए गिद्धों के पीछे दौड़े। जब राजा को होश आया और उसकी आँखें खुलीं, तब उसने पूछा- "नौकर कहाँ हैं !"

इतने में एक-एक करके सभी नौकर मुँह लटकाए लौट आए। ठीक आज से तीन साल पहले राजा ने जो मन-गढ़न्त कहानी रानी से कही थी, वह अक्षरशः पूरी हो गई। यह देख कर राजा के कलेजे पर छुरी चल गई। उसने सोचा-"आज यह दुघर्टना होने ही वाली थी। इसलिए उस दिन मेरे मुँह से ये बातें निकल पड़ी थीं। बड़ों का कहना भी है कि होनहार को कोई रोक नहीं सकता।" राजा सिर पीट-पीट कर रोने लगा।

लेकिन जो होना था सो तो हो ही गया। सचमुच किसी दुष्ट ग्रह की प्रेरणा से ही उस दिन राजा अपने निश्चय से डिग गया और लड़कियों को अवधि पूरी होने के पहले ही बाहर ले आया। "अब पछताए होत क्या, चिड़ियाँ चुग गई खेत !"

अब रानी से यह बात छिपाने से क्या फायदा था ? इसलिए राजा ने नौकर-चाकरों के साथ महल में जाकर बड़ी हिचकिचाहट के साथ रानी से सारी कहानी कह सुनाई । दोनों के शोक का अब कोई ठिकाना न था।

[यह भयङ्कर समाचार सुन कर रानी की क्या दशा हुई ? गिद्धों के द्वारा उड़ाए जाने के बाद उन मासूम बच्चियों का क्या हाल हुआ? आदि बातें अगले अङ्क में पढ़िए !]





पुराने जमाने में वारणावत नामक नगर में ब्रम्हदत्त नामक राजा राज करता था। वह बड़ा बलवान था। उसे दूसरे राज्यों को जीतने की बड़ी इच्छा रहती थी। उसने बहुत से छोटे-छोटे राज्यों पर चढ़ाई करके उन्हें आपने राज्य में मिला लिया था। तो भी उसे सन्तोष न हुआ।

एक बार उसने अपने निकट के छोटे से कोसल-राज पर चढ़ाई करके आसानी से उस पर कब्जा कर लिया।

कोसल राज्य का राजा था दीर्घहेति। वह छोटा सा राजा था। शतृ बड़ा बलवान था। फिर वह कर क्या सकता? वह अपनी गर्भवती स्त्री के साथ निकल भागा और भेस बदलकर एक गरीब के घर में गुजर करने लगा।

ब्रम्हदत्त ने कोसल राज को जीत तो लिया। लेकिन उसे आनन्द न हुआ। क्योंकि दीर्घहेति अन्य राजाओं की तरह कायर न था। इसलिए उसने उसकी अधीनता स्वीकार न की। उसने सोचा-"शत्रु शेष और चरण-शेष न रहने देना चाहिए। दीर्घहेति को खोज कर मार ही डालना चाहिए।" यह निश्चय करके उसने चारों ओर अपने गुप्तचरों को उसका पता लगाने के लिए भेज दिया।

उधर गरीब के घर में रहते दीर्घहेति की स्त्री को एक पुत्र पैदा हुआ। तब दीर्घहेति ने कहा-"अभी हमारे कष्ट के दिन हैं। भगवान हमारी परीक्षा ले रहा है। हम कभी न कभी जरूर पकड़े जाएँगे। इसलिए हमें किसी न किसी तरह इस बच्चे की जान बचानी चाहिए।" यह कह कर दीर्घहेति ने बच्चे का नाम दीर्घायु रखा और वहाँ से दूर पर एक के घर में उसे सौंप दिया। लड़के से विदा होते वक्त उसने अपनी तलवार भी वहीं छोड़ दी और कहा-“दीर्घायु के बड़े होने पर यह तलवार उसे दे दो।"

स्वरुप कुमार



दीर्घहेति ने जो सोचा था वही हुआ। कुछ दिन बाद ब्रम्हदत्त के गुप्तचरों ने उसका पता लगा दिया और वह अपनी पत्नी सहित पकड़ा गया। "तुम्हारा पुत्र कहाँ है !" उससे पूछा गया।

"मैं नहीं बताता।" दीर्घहेति ने कहा।

"अच्छा देखता हूँ न कि कैसे नहीं बनाते हो। ले चलो इसे राजा के पास।" सिपाहियों के सरदार ने कहा। वे उसे पकड़ ले गए। उन्हें देखते ही ब्रम्हदत्त ने पूछा-"बच्चा कहाँ है ?"

तब दीर्घहेति ने कहा "तुम मेरा राज्य चाहते थे। वह तो तुमने ले ही लिया। लेकिन तुम्हें सन्तोष न हुआ। तुमने हमें पकड़ मँगाया। अब अगर चाहो तो हमारी जान भी ले सकते हो। लेकिन उस मासूम बच्चे का पता तुम हमसे नहीं पा सकते। उसने तुम्हारा कुछ नहीं बिगाड़ा है।"

"तुम्हारी जान लेने से मेरा खटका नहीं मिटेगा। मैं तुम्हारे वंश को निर्मूल करना चाहता हूँ। तुम अपने बच्चे का पता बता दो तो मै तुम दोनों की जान छोड़ दूँगा।" ब्रम्हदत्त ने कहा।

"तुम जो चाहो करो ! लेकिन में बच्चे का पता नहीं बताउँगा।" दीर्घहेति ने कहा। दीर्घहेति को बहुत कष्ट दिए गए। लेकिन उसने बच्चे का पता नहीं बताया। आखिर उन दोनों को मार डाला गया।

दूर ब्राह्मण के घर में गुप्त रूप से पलते हुए दीर्घायु को अपने माता-पिता के मरने का हाल मालूम हुआ। बस उस दिन से उसका हृदय ब्रम्हदत्त से बदला लेने के लिए छटपटाने लगा।

इधर ब्रम्हदत्त भी उस लड़के का ख़याल करके मन ही मन चिन्ता में घुलने लगा ।

दीर्घायु ने अपना नाम भी बदल लिया और इस तरह से बरतने लगा कि कोई उसे पहचान न पाए। धीरे से उसने ब्रम्हदत्त के

राज्य में प्रवेश किया और उसके अस्तबल में नौकरी कर ली। कुछ ही दिनों में अपनी विनय, चतुरता आदि गुणों से उसने राजा ब्रम्हदत्त का ध्यान भी अपनी ओर आप आकर्षित कर लिया। उससे सब खुश रहते थे। कुछ दिन बाद ब्रम्हदत्त ने उससे खुश होकर अपने अङ्ग-रक्षक का पद उसे दे दिया। इतना ही नहीं। उस दिन से वह दीर्घायु को छोड़ कर एक मिनट भी नहीं रह सकता था। यह उसका प्राण-मित्र बन गया। दोनों में गहरी छनने लगी।

एक बार राजा दीर्घायु को साथ लेकर शिकार खेलने गया। सिपाहियों को पीछे छोड़ कर दोनों निकल गए। इस तरह बहुत देर तक घूमने के बाद राजा थक गया और दीर्घायु की जाँघ पर सर टेक कर गाढ़ी नींद में डूब गया।

ब्रम्हदत्त को इस तरह सोते देख कर दीर्घायु के मन में अनेकों विचार उठने लगे। उसने सोचा-"इसी पापी ने मेरे पिता का राज्य छीन लिया। इतना ही नहीं, इसने मेरे निर्दोष माता-पिता को मरा डाला। ऐसे पापी को जो भी दण्ड दिया जाए थोड़ा ही हैं। इसको मारने से बहुत ही पुण्य होगा। माता पृथ्वी की छाती पर से बड़ा भार हट जाएगा। अनेकों छोटे



छोटे राजा मन ही मन मुझे आशीष देंगे। लोगों का तो भला होगा ही। इसको मार डालना चाहिए। इसे दण्ड देने में देरी नहीं करनी चाहिए।" यह सोच कर उसे जोश आ गया। उसने बिजली की तरह अपनी सलवार म्यान से बाहर निकाल ली। लेकिन अचानक उसे एक छोटा सा दोहा याद आ गया जो उसके बचपन में पिता अकसर गाया करते थे "छिमा बड़न को चाहिए, छोटन को उतपत। का रहिमन हरि को घट्यो, जो भृगु मारी लात।" तुरन्त उसने तलवार म्यान में रख ली।

इतने में राजा चौक कर जग गया और डर से काँपता उठ बैठा।

तब दीर्घायु ने अचरज से पूछा-"क्या हुआ हुजूर!" तव ब्रम्हदत्त ने कहा- "मित्र ! मेरे जीवन पर दुश्चिन्ता की छाप पड़ गई है। मैने एक राजा को मरवा डाला। उस राजा का एक लड़का अभी जीता है। उसका नाम दीर्घायु है। वह मुझसे बदला लेने की होड़ लगाए होगा। इसी चिन्ता से बहुत दिनों से मैं घुला जा रहा हूँ। नींद में भी उस लड़के के बारे में सपना देखता हूँ। कभी कभी तो ऐसा मालूम होता है कि वह एक लम्बी तलवार लेकर मुझे मारने आ रहा है। ऐसा ही एक सपना अभी मैंने देखा। इसी से अचानक नींद टूट गई।" इस तरह उसने पूरी कहानी सुनाई और अपना अपराध स्वीकार कर लिया।

"महाराज !" दीर्घायु ने पुकारा। ब्रम्हदत्त ने सिर उठा कर देखा। तब दीर्घायु ने तलवार म्यान से निकाल कर कहा-"मैं ही वह दीर्घायु हूँ जिसके मारे तुम्हारी आँखों की नींद हराम हो गई है। तुम्हारे पापों का दण्ड देने के लिए ही मैंने तुम्हारे दरबार में नौकरी कर ली। आज मुझे मौका मिल गया। अभी तुम्हारी जान मेरे हाथ में है। चाहूँ तो मैं अभी तुम्हें यम के घर पहुँचा सकता हूँ। लेकिन नहीं, मुझे एक दोहा याद आ गया जो मेरे पिताजी अकसर पढ़ा करते थे। इसी से में तुम्हें क्षमा कर देता हूँ ! जाओ! उस दोहे के कारण तुम्हारी जान बच गई। आज से तुम्हें मेरी तरफ से कोई खतरा न रहेगा। मैं बादा करता हूँ !" यह कह कर दीर्घायु ने राजा को अपनी तलवार दिखा दी जिस पर दीर्घायु का नाम खुदा हुआ था।

तब ब्रह्मदत्त ने पछतावे के आँसू बहाते हुए उसको गले से लगा लिया और कहा-"दीर्घायु। तुम्हारे पिता महापुरुष थे। हाय! मैं कितना अभागा हूँ कि ऐसे सत्पुरुष को मार डाला मैंने !" उस दिन से ब्रम्हदत्त ने अपना स्वभाव बदल लिया।





कलकत्ते के एक मुहल्ले में श्यामनन्दन जी बहुत से मकानों के मालिक थे। वे खुद एक मकान में रहते थे। बाकी मकान उन्होंने भाड़े पर लगा दिए थे। जो घर उन्होंने भाड़े पर दिए थे, उनमें एक ऐसा था जो बहुत छोटा सा था पर उसकी बाड़ी बड़ी थी।

उसमें रामलाल नाम के एक स्कूल मास्टर पन्द्रह रुपए किराया देकर रहते थे। रामलाल की पत्नी सुखवती को वह घर सब तरह से अच्छा लगा। उसमें सब तरह की सुविधा थी। लेकिन बाड़ी में एक बड़ा शमी का पेड़ था। उसे देखते ही उसे डर लगा।

"शमी के पेड़ पर तो भूत रहते हैं और भूतों से मुझे बड़ा डर लगता है। इसलिए मकान मालिक से कह कर यह पेड़ कटवा दीजिए।" उसने अपने पति से कहा।

"भूत-प्रेत कुछ नहीं! अभी इस पेड़ को कटवाने में बहुत खर्च खोगा। मकान मालिक नहीं देगा। इसलिए ऐसी बात न चलाओ।" रामलाल जी ने स्त्री से कहा । रामलाल जी कह तो गए कि भूत-प्रेत कुछ नहीं। लेकिन सुखवती के मन में डर समा गया। इसलिए वह बार बार पति को उस पेड़ की याद दिलाती रही।

आखिर जब उनके नाकों दम हो गया, तो उन्होंने यह बात मकान मालिक से कह दी और यह पेड़ कटवा देने को कहा।

"खैर, पेड़ कटवा दिया जाएगा। क्योंकि यह तो कोई फल देने वाला वृक्ष है नहीं।" यह कह कर श्यामनन्दन जी ने उनकी बात मान ली। फिर उन्होंने मजदूरों को खबर भी भेज दी। लेकिन किसी कारण से उस समय वे न आ सके और यह काम वैसे ही रह गया। पीछे रामलाल जी से किसी बात पर झगड़ा हो जाने के कारण उन्होंने पेड़ कटवाने का निश्चय बदल लिया। रामलाल ने

नन्दलाल



भी फिर कभी यह बात न चलाई। इस तरह कुछ दिन बीत गए। दोनों में झगड़ा होने का कारण यह था कि अन्य नगरों की तरह कलकत्ते में भी मकानों के भाड़े बढ़ गए थे। महँगाई का जमाना था। मौका देख कर श्यामनन्दन ने भी अपने सभी मकानों का किराया बढ़ा दिया। रामलाल अब तक पन्द्रह देते आए थे। उन्होंने कहा-"आप अगले महीने से पच्चीस रुपए माहवार दीजिए।"

उनकी यह बात सुनते ही रामलाल का कलेजा बैठ गया। उनकी कुल आमदनी मासिक अस्सी रूपए से ज्यादा न थी। फिर वे पच्चीस रुपए माहवार देकर बीवी बाहों का पेट क्या पाल सकते थे ! उन्होंने यह श्यामनन्दन से कह दिया। लेकिन श्यामनन्दन ने कहा-"तो क्या करूँ? अगर आप यह मकान छोड़ दें तो बहुत से लोग चालीस तक देने को तैयार हैं। मैंने सोचा, आप गरीब आदमी हैं। इसीलिए मैंने पच्चीस माँगे।"

"आपका कहना ठीक है। लेकिन मैं उतना नहीं दे सकता। अठारह दे दूँगा। गरीब आदमी हूँ।" रामलाल ने गिड़गिड़ा कर कहा।

"बड़े आए हैं अठारह देने वाले। मैं पच्चीस से एक धेला भी कम नहीं लूँगा। अगर मञ्जूर नहीं है तो आज ही मकान खाली कर दीजिए।" श्यामनन्दन ने क्रोध के साथ कहा और वहाँ से चल दिए। उन्होंने सोचा कि रामलाल भोला आदमी है। जरा दबाव डालने से मकान छोड़ कर चला जाएगा। इसलिए वे उस दिन से उसे बात-बात पर तङ्ग करने लगे।

लेकिन जब रामलाल को और कोई चारा नहीं रहा तो उन्होंने भी हठ कर लिया कि चाहे जो भी हो, हम इस घर से नहीं हटेंगे।

इससे मकान मालिक का गुस्सा और भी बढ़ गया और उन्होंने भी हठ कर लिया कि चाहे जैसे भी हो, इसे घर से हटा कर ही छोड़ूँगा। इसके कुछ दिन बाद एक रोज तड़के

ही मजदूरों ने आकर श्यामनन्दन से पूछा-"बाबूजी ! आपने कुछ दिन पहले हमें पेड़ कटवाने को बुलाया था।"

पेड़ काटने की बात सुनते ही श्यामनन्दन को रामलाल की स्त्री की बात याद आई। तुरन्त उनके मन में एक उपाय सूझ गया। उन्होंने उन मजदूरों में से मधु नामक एक मजदूर के सिवा बाकी सब को चले जाने को कहा। उसके बाद अकेले में उन्होंने मधुआ से कहा “पेड़ काटने से तुझे क्या मिलेगा ? मेरा एक काम करेगा ? करेगा तो दस रुपए मिलेंगे !" "क्यों न करूँगा ?" मधुआ ने कहा। तब श्यामनन्दन ने उसे एक रहस्य बताया और कहा-"रामलाल घर में नहीं है। गाँव गया है। इसलिए आज ही रात यह करो तो अच्छा हो।"

"मैं जरूर यह काम करूँगा और कल इसी वक्त आकर इस दस रुपये ले जाऊँगा।" यह कह कर मधुआ चला गया। पति के घर पर न होने के कारण उस दिन सुखवती ने जल्दी-जल्दी खा-पीकर बच्चों को सुला दिया और खुद भी लेट गई। जब आधी रात हो गई और वह गाढ़ी नींद में थी तो उसके छप्पर पर कहीं



से एक पत्थर आ गिरा। उस धमाके की आवाज से उसकी नींद टूट गई। उसने सोचा-"देखें जाकर बात क्या है ?" इसलिए वह अपनी बड़ी लड़की को लेकर बाहर गई। इतने में उसे अँधेरे में पेड़ के ऊपर से "हुँ! हुँ !" की डरावनी आवाज सुनाई दी।

सुखवती के कलेजे में खलबली मच गई। उसने पेड़ की ओर देखा तो एक डाल पर आग की एक लपट उठी और तुरन्त बुझ गई। पल भर की उस रोशनी में उसे एक भयङ्कर जीव पेड़ पर से कूदता हुआ और उसकी ओर दौड़ता हुआ दिखाई दिया। यह देखते ही सुखवती के होश उड़

गए। भूत को देख कर चीख मार कर वह तुरन्त बेहोश होकर गिर पड़ी।

तुरन्त मधुआ जो थोड़े समय के लिए भूत बना था, पेड़ के दूसरी ओर कूद कर भाग गया। माँ को बेहोश होते देख कर लड़की चिल्लाने लगी। यह सुन कर आस-पड़ोस के लोग जाग कर "क्या हुआ ?" कहते हुए दौड़े आए। सुखवती की अनेक सहेलियाँ आईं। उनमें से एक ने उस रात उसी के घर में सोकर सवेरे तक पहरा दिया। सवेरा होने के बाद भी जब-जब पेड़ के भूत की याद आती तब-तब सुखवती की छाती जोर से धड़कने लगती। बहुत लोगों ने उसे बहुत कुछ समझाया। लेकिन उसने एक न सुनी और कहा-"अब मैं इस घर में हरगिज नहीं रहूँगी।" उसकी हालत देख कर किसी पड़ोसी ने अपने घर का आधा हिस्सा उसे किराए पर दे दिया। तुरन्त सुखवती बच्चों के साथ वहाँ जाकर रहने लगी।

जब रामलाल गाँव से आए तो उन्होंने सारी बातें मालूम कर ली। उन्होंने किराए का हिसाब देखा और घर खाली कर दिया।

श्यामनन्दन को अब बड़ी खुशी हुई कि उनकी चाल यों काम आई। तुरन्त उन्होंने नए किराएदारों की खोज शुरू कर दी। लोग आकर घर देख कर जाने लगे। लेकिन कोई लौट कर आने का नाम न लेता था। बात यह थी कि हर कोई अपने घर जाकर कहता था कि आज मकान मिल गया। लेकिन मकान की बात सुनते ही घर की औरतें कहती-"वह मकान। वही श्यामनन्दन जी का मकान न ! वह तो भुतहा पर है। हम नहीं रह सकतीं उसमें। और कोई मकान ढूँढ़िए।" इससे किसी को उस मकान में जाकर रहने की हिम्मत नहीं पड़ती थी। यहाँ तक कि सबको उस मकान की बात मालूम हो गई और वह मकान अब तक खाली ही पड़ा हुआ है।





कई सौ बरस पहले की बात है। जापान में ओमजो नामक एक किसान रहता था। उसका एक ही लड़का था जिसका नाम था हित्सू। उसके पास चार एकड़ जमीन थी जिसमें धान पैदा होता था। इतनी जमीन में अगर वह ठीक से खेती करता, तो खा पीकर कुछ बचा भी सकता था। लेकिन अजीब बात तो यह थी कि ओमजो तीन ही एकड़ में खेती करता और एक एकड़ यों ही परती छोड़ देता था।

हित्सू को यह अच्छा न लगा। वह अपने बाप से कहने लगा-"हम जिस साल जितना पैदा करते हैं, उसी साल खा-पीकर खतम कर देते हैं। अगर अकाल पड़ गया तो हम क्या करेंगे ? हमें आगे का भी तो कुछ ख्याल रखना चाहिए !"

लेकिन ओमजो अपने निश्चय पर अटल रहा। वह उसे समझाता-" बेटा! तुम्हारा कहना ठीक है । लेकिन तुम बराबर अपनी ही बात क्यों सोचते रहते हो ! क्या तुमने कभी सोचा है कि अगर हम परती न छोड़ देंगे तो उन गूँगे जानवरों का क्या हाल होगा ? सोचो तो खेतों में जो अन्न उपजता है वह भी तो उन्हीं की कमाई है। जानवर न रहें तो खेती कौन करेगा ? फिर अगर वे भूखे रह गए तो हमारी क्या मदद करेंगे। इसलिए कुछ उनका भी तो ख्याल रखना जरूरी है।"

इस तरह बाप-बेटे में परावर वाद-विवाद चला करता था। कभी-कभी तो यह याद विवाद इतना बढ़ जाता था कि बीच-बचाव करना पड़ता था। लेकिन बीच विचाव करने वाले को दोनों पक्षों की बात ठीक जँचती और वे किसी का समाधान नहीं कर सकते।

आखिर बरसों बिबाद करके भी जब कुछ फायदा न हुआ तो हित्सू ऊब गया। वह

कुमारी आभा



सोचने लगा-"इतना कहने पर भी बूढ़ा नहीं मानता। अपना हठ नहीं छोड़ता। अच्छा और कितने दिन इसका हठ चलेगा !" आखिर वह घड़ी भी नजदीक आ गई जब ओमजो इस संसार से विदा लेने को तैयार हो गया। अन्तिम समय में उसने लड़के को बुला कर कहा "बेटा ! तुम जानते ही हो कि परती जमीन के बारे में मैंने कितना हठ किया। मैं यह भी जानता हूँ कि मेरे न रहने पर तुम जो चाहोगे करोगे। कोई रोकने वाला न होगा। पर तुम मेरा कहना सुनो। मेरे सामने वादा करो कि तुम एक एकड़ वैसे ही परती छोडे रहोगे। तब मैं निश्चिन्त होकर आँखें मूद सकूँगा।" बूढ़े की आँखों में आँसू भर आए।

तब हित्सू ने कहा-"पिताजी ! मैं आपकी इच्छा पूरी करना ही अपना धर्म समझता हूँ।"

यह सुन कर ओमजो का मन निश्चिन्त हो गया और उसकी साँस बन्द हो गई। लेकिन पिता के मरते ही हित्सू अपना वादा भूल गया। उसने जो इतने दिनों से सोच रखा था, उसे पूरा कर ही दिया। कुछ ही दिनों बाद उसने परती जमीन जोत ली। जमीन उपजाऊ थी। इसलिए उसे खेती के लायक बनाने में कोई मुश्किल न हुई । यहाँ तक कि उसमें बीज भी वो दिए गए। पौधे भी निकल आए ।

थोड़े दिन बाद फसल काटने का समय आया। फसल देखकर हित्सू गर्व से भर गया। लेकिन उसी समय एक विचित्र बात हुई।

एक दिन सवेरे हित्सू अपने खेत में गया। वहाँ खड़ा खड़ा अपने खेत की ओर देख रहा था कि इतने में उसे मनुष्य की सी आवाज में यह गाना सुनाई पड़ा-"अपनी भूल सुधारो प्यारे ! मान पिता की बात दुलारे। अपना हठ छोड़ो तुम भाई।

सब सङ्कट टल जाए भाई।" यह सुन कर हित्सू ने चारों ओर घूम कर देखा ! लेकिन उसे कहीं कोई आदमी न दिखाई पड़ा। "यह तो गजब की बात है !" यह सोचते हुए वह धीरे-धीरे अपने खेत की ओर देखने लगा। इतने में फिर उसे यही गाना सुनाई दिया। इस बार हित्सू ने उस ओर गौर से देखा जहाँ से यह गाना आ रहा था।

एक बबूल के पेड़ पर उसे एक हिरामन दिखाई दिया वाह ! "यह तोता मनुष्य की तरह कैसे गाता है ? इसके अलावा इसे मेरे पिता की बात कैसे मालूम हुई !" यह सोच कर हित्सू ने उस तोते से पूछा-"हिरामन ! तुम कौन हो ! हमारे घर की बातें तुम्हें कैसे मालूम हुई ?"

"मान लो, किसी तरह मालूम हो गई ! मैं जो कुछ कहता हूँ तुम्हारी भलाई के लिए ही। वादा तोड़ने से बढ़ कर दूसरा क्या पाप हो सकता है ? क्या तीन एकड़ जोतने से तुम्हारा पेट नहीं पल सकता ? क्यों नाहक लालच में पड़ते हो ? अब भी कुछ बिगड़ा नहीं। इस फसल को काटना छोड़ दो और आज ही यह एकड़ अपने जानवरों के लिए छोड़ दो !" हिरामन तोते ने हित्सू को सलाह दी।



लेकिन उसकी बात सुन कर हित्सू ने ठठा कर हँसते हुए कहा-"वाह ! बड़ा आया है सलाह देने वाला तू ! जा जा !" तुरन्त तोता फुर्र से उड़ गया।

दूसरे दिन फिर हित्सू अपना खेत देखने आया। लेकिन खेत में वहाँ क्या था ! पिछले दिन जहाँ हरी भरी फसल लहरा रही थी वहाँ आज सूखी, उजड़ी जमीन दरारों से भर रही थी। पहले तो उसे सन्देह हुआ कि कहीं मैं दूसरे के खेत में तो नहीं आ गया हूँ। लेकिन थोड़ी देर बाद उसे निश्चय हो गया कि वह उसी की जमीन है। अब हित्सू की आखों में आँसू उमड़ आए। फिर भी



न? इसीलिए तुम यह खेत जोत रहे हो न ?" तोते ने उससे पूछा।

"हाँ! उसी लिए!" हित्सू ने जवाब दिया।

"तुम्हें एक उपाय बताता हूँ। सुनो। तुम्हारे तीन एकड़ो में जो अन्न उपजे उसे तुम अकाल के दिनों के लिए बचा कर रखो। तुम्हारे हर रोज़ के लिए खाने की चीजें मैं तुम्हें ला दिया करूँगा। मञ्जूर है न!" तोते ने पूछा।

"मञ्जूर है। इसमें मुझे कोई हर्ज़ नहीं।" हित्सू ने जवाब दिया। "अच्छा, तो कल में ठीक इसी समय यहाँ आ जाऊँगा। तुम मुझे अपने साथ घर ले जाना।" हिरामन यह कह कर तुरन्त उड़ गया।

दूसरे दिन हित्सू ने खेत के पास आकर थोड़ी देर तक तोते की राह देखी। इतने में वह आ गया। वह अपनी चोञ्च से एक छोटा सा मट्टी का कटोरा पकड़े लाया था। हिरामन को हित्सू अपने साथ घर ले गया और कहा-"अच्छा, आज खाने के लिए क्या लाए हो ?"

तोते ने वह कटोरा हित्सू के सामने रख दिया और तीन बार उसकी प्रदक्षिणा

उसने अपना हठ न छोड़ा। यह उस खेत को फिर से जोतने लगा। लेकिन दूसरे दिन हित्सू ने आकर जो देखा तो जमीन ऐसी दीखी, जैसे इस पर कभी हल चला ही न हो।

बस, हित्सू का गुस्सा और भी बढ़ गया। उसने सोचा-"यह सब उस तोते की ही करनी है!"

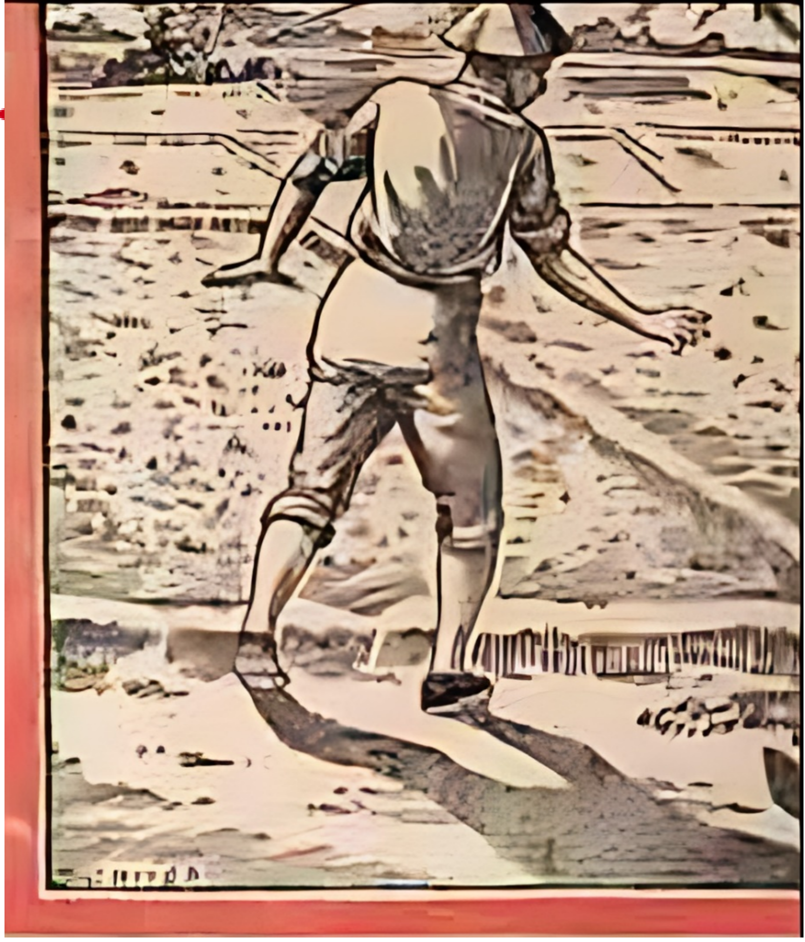
इतने में कहीं से एक आवाज़ आई- "यह सब तुम्हारा मूर्खता का ही फल है।" हित्सू ने पेड़ की ओर आँख उठाई। तोता बैठा था।

"अकाल पड़ने पर काम में लाने के लिए अनाज जमा करना चाहते हो

करके हित्सू से कहा-"तुम जो चीजें खाना चाहते हो, मन में एक बार उनका नाम लेकर इस कटोरे को जमीन पर औंधा रख दो।"

हित्सू ने वैसे ही किया तो उसकी मन-चाही चीजें कटोरे में से निकल आईं। उन्हें खाकर हित्सू को बहुत आनन्द हुआ। फिर उसने वह कटोरा हिफाजत से एक जगह धर दिया और तोते को पिञ्जड़े में बन्द कर दिया। उस रात हित्सू ने अपनी भूख मिटाने के लिए बर्तन निकाला और तीन बार तोते की तरह प्रदक्षिणा करके उसे जमीन पर उलट दिया। लेकिन कुछ न हुआ। तोते ने, जो पिञ्जड़े में बैठा हुआ था, कहा-"यह महिमा मुझमें है। कटोरे में नहीं। अगर तुम खाने की चीजें चाहते हो तो मुझे बाहर निकालो।"

हित्सू ने उसे बाहर निकाला। इस तरह एक हफ्ता बीत गया। तब हित्सू के मन में कुचाल पैदा हुई। उसने सोचा-'तोते को मैंने पिञ्जड़े में बन्द कर ही दिया हुआ है। इसलिए मैं फिर उस खेत को क्यों न जोतू!" उस दिन से हित्सू जो कभी पर छोड़ कर नहीं जाता था, अब सबेरे घर से निकल जाता और खूब अन्धेरा होने



के बाद वापस आता था। यह देख कर तोते के मन में सन्देह पैदा हुआ।

उसने सोचा "इसे कौन-सी ऐसी जरूरत आन पड़ी है जो यह सबेरे घर से निकल जाता है और रात को लौटता है ! पेट के लिए तो इसे अब कोई काम नहीं करना पड़ता है।" वह बार बार हित्सू से इसका कारण पूछने लगा ।

हित्सू उससे कहता-"घर में बेकार बैठे- बैठे मन ऊब जाता है। इसलिए ज़रा बाहर घूम-फिर आता हूँ।" इस तरह बहाने बाजी किया करता था। असल बात तो यह थी कि हित्सू फिर से खेती करने लग गया था।

उसने सोचा था कि "तोता तो अब मेरी मुट्ठी में है। फिर डर क्या है।" कुछ दिन बाद उस खेत में फसल लगी, पकी और कटने पर आई।

एक दिन खाने के सतय हित्सू रोज की तरह तोते को पिञ्झड़े से निकालने गया जिससे उसे फटोरे से खाना मिले। लेकन पिञ्झड़े के पास जाकर वह देखता गया है कि तोता गायब है। दौड़ा-दौड़ा यह खेत में पहुँचा। उसे जो डर था, वही हुआ। देखता क्या है कि खेत की फसल गायब है और खेत ऊसर बन गया है। यह देख कर हित्सू ने आँखों से आग बरसाते हुए बबूल के पेड़ की ओर देखा।

तब तोते ने पेड़ पर से कहा-"भई मैंने कभी नहीं सोचा था कि तुम मुझे इस तरह धोखा दोगे। सच है, लालच बुरी बला है ! मैंने तुम्हें तरह तरह से समझाया। यही नहीं, घर बैठे तुम्हें खाना दिया। फिर भी तुमने अपना लोभ नहीं छोड़ा। इसी से अब यह दृश्य देखना पड़ा। मैंने इतने दिन तक तुम्हारी देख-भाल की। तुम्हारे लिए अनेको कष्ट उठाए। जानते हो, यह सब मैंने क्यों किया ? मैं कोई पराया नहीं हूँ। तुम्हारा पिता हूँ।" यह कह कर तोता पेड़ से उत्तरा और हित्सू के पैरों पर गिर कर मर गया।

यह देख कर हित्सू जोर-जोर से आँसू बहाने लगा। अपने पिता के प्रति उसने जो द्रोह किया था उसकी याद करके उसका हृदय पछतावे की आग में जलने लगा। वह सिर पीटने लगा। लेकिन अब क्या हो सकता था । दूसरे दिन उसने उसी खेत में उस तोते की समाधि बनाई। फिर कभी स्वप्न में भी इस खेत को जोतने का विचार नहीं किया। उसके मरने के बाद भी किसी ने उस खेत में हल चलने की कोशिश न की । इसलिए यह जमीन हमेशा के लिए परती बन गई।





गङ्गानगर में गणपति शर्मा एक मामूली गृहस्थ थे। वे एक देवी की पूजा करते थे, जिसका नाम था 'इष्ट कामेश्वरी'। उसी गाँव में धनराज नाम का एक गरीब बनिया भी रहता था। नाम बड़े और दर्शन थोड़े। नाम धनराज पर घर में भूँजी भाँग नहीं! इसलिए उसने शर्माजी के पास जाकर अपना दुखड़ा रोया और धनी बनने का उपाय पूछने लगा। सुनते-सुनते शर्माजी ने कहा-"मैं जिस देवी की पूजा करता हूँ, तुम भी उसी की पूजा करो। अगर हम पर उनकी कृपा हुई तो हमारी सभी इच्छाएँ पूरी हो जाएँगी।"

उनकी बात सुनकर धनराज ने कहा-"मैं फिर अपने घर में अलग पूजा का झञ्झट क्यों लगा रखूँ ? मैं भी पूजा के समय रोज आप के घर आ जाऊँगा और देवी को दण्डबत कर लूँगा।"

"ठीक है।" शर्माजी ने कहा। कुछ दिन बाद उन दोनों की भक्ति से प्रसन्न होकर देवी प्रत्यक्ष हुई। उनके चारों हाथों में एक एक नारियल था। "तुम लोग जो चाहो माँग कर ये नारियल फोड़ लो। तुम्हारी इच्छाएँ पूरी हो जाएँगी।" यह कह कर देवी ने तीन नारियल तो शर्माजी को दिए और एक धनराज को दे दिया। फिर वे अन्तर्धान हो गई। धर्माजी बहुत खुश हुए। लेकिन धनराज का मुँह लटक गया। उसने अपने पर जाकर पत्नी से सारा हाल सुनाया और कहा-"देखो तो ! देवी ने भी पक्षपात किया ! ब्राम्हण को तीन नारियल दिए और मुझे एक ही।"

"जाने दीजिए! अगर तकदीर अच्छी रही तो एक ही काफी है। उताबली में कुछ का कुछ न माँग कर हम दोनों सोच-विचार कर माँग लेंगे।" धनराज की पत्नी ने कहा।

करुणा दत्त



धनराज धन-दौलत माँगना चाहता था। लेकिन उसकी पत्नी बेटे-बेटिया, नाती-पोते चाहती थी। फिर धनराज ने सोचा कि उनके शादी-ब्याह देख कर आँख ठण्डी करने के लिए लम्बी उमर भी चाहिए। उसकी स्त्री ने सोचा कि नाती पोते उनके बुढ़ापे में सेवा टहल करें तो अच्छा हो। इस तरह सोच सोच कर उन दोनों के मन में सन्देह उठा कि एक नारियल से इतनी इच्छा कैसे पूरी होंगी !

आखिर धनराज को एक उपाय सूझ गया। उसने खूब सोच-विचार कर अपनी सब इच्छाएँ संक्षेप में एक पूर्जे पर योन लिख डाली-"देवी! हमें ऐसा वर दो, जिससे मेरे पुत्र, पौत्र, प्रपौत्र, और दौहित्र अपनी स्त्रियों के साथ आकर सात मञ्जिलों वाले चाँदी के महल में अपने पोते के लड़के को सोने की जञ्जीरों से झूलते हुए रत्न-जटित पालने मैं लिटा कर अपने शरीर पर के नव-रत्न जड़े गहने झंकृत करती हुई, झुलाने वाली मेरी स्त्री की और पास में खड़े होकर देखने से आनन्दित होने वाले इस बन्दे की सेवा करे।" उसने यह अपनी पत्नी को भी दिखाया।

तब उसने कहा- "वाह ! आपने कैसे एक वाक्य में सभी बातें लिख डालीं। अच्छा है ! अब देरी न कीजिए। इस पुर्जी को सावधानी से पढ़ कर नारियल फोड़ दीजिए !"

धनराज ने वैसे ही किया। तुरन्त उसका पुराना मकान सात मञ्जिल वाले महल में बदल गया। धनराज की के बदन पर नव-रत्न-खचित गहने जगमगाने लगे। इतना ही नहीं, उसके कुछ ही दिनों में सन्तान के आगम की आशा भी हो गई। अपने मन की सभी इच्छाएँ पूरी होती देख कर धनराज और उसकी पत्नी बहुत आनन्दित हुए।

जिस तरह धनराज ने वर माँगने के विषय मैं अपनी पत्नी की राय पूछी, उस तरह शर्माजी ने नहीं पूछी। उनको शक था कि उनकी स्त्री मायके वालों से ज्यादा पेम रखती है। इसलिए उस पर विश्वास करना अच्छा न होगा। इसलिए शर्माजी ने स्त्री की राय बिना पूछे ही मन में कुछ सोच कर नारियल कोड़ना चाहा।

लेकिन उन्होंने जो शङ्का की थी, वही हुआ। उनकी पत्नी ने इतने में यहाँ आकर कहा-"अजी। दो नारियलों से आप जो चाहें माँग लें। तीसरे से तो जरूर ऐसा बर माँगिए जिससे हमारा घर सोने-चाँदी से भर जाए।"

पत्नी के प्रति शर्माजी के मन में क्रोध था ही। इसलिए उन्होंने जल कर कहा-" सोने-चाँदी से नहीं, सारा घर बतख के अण्डों से भर जाए।" यह कह कर नारियल फोड़ डाला।

बस, अब क्या था ? उनकी इच्छा सचमुच पूरी हुई। सारा घर बतख के अण्डों से भर गया।

यह देखकर शर्माजी का मन झुञ्झला गया। उन्होंने और एक



नारियल फोड़ते हुए कहना चाहा कि अण्डे गायब हो जाएँ। लेकिन जल्दी में मुँह से निकल गया-"आँखें गायब हो जाएँ।" बस, अब क्या था ? दोनों अन्धे हो गए। इस दुर्घटना के कारण बहुत दुखी होकर शर्माजी ने आखिर फिर आँखें पाने के लिए तीसरा नारियल उठाया और कहा-"आँखें फिर मिल जाएँ।" यह कह कर तीसरा नारियल भी फोड़ डाला। उन्हें फिर आँखें तो मिल गई। लेकिन देवी के घर से उन्हें कुछ भी फायदा न हुआ।

इसलिए जो सोच समझ कर काम करता है, वही सुखी होता है।



बात का पक्का

किसी गाँव में वनमाली नाम का एक ग़रीब आदमी रहता था। यह अविवाहित था। उसका पेशा क्या था, वह जीविका कैसे चलाता था, यह किसी को मालूम न था। अब आप सोचिए कि जिसको घरवार की चिन्ता न हो वह रुपए-पैसे से क्या करेगा ! लेकिन बात ऐसी न थी। वास्तव में ऐसा एक भी दिन न जाता था जब कि वनमाली किसी न किसी से उधार न माँगता हो। इस तरह उधार ले लेकर वह करता क्या था, यह किसी को मालूम न था।

बनमाली जब पहले-पहल उस गाँव में आया तो उसने कृपाराम जी से एक दुअन्नी उधार ली। "कृपाराम जी! मैं परसों ही लौटा दूँगा आपकी यह दुअन्नी !" उसने वादा किया। अपने वादे के मुताबिक तीसरे दिन शाम को कृपाराम के घर जाकर उसने दुअन्नी लोटा दी।

कृपाराम को पहले उस पर भरोसा न था। क्योंकि वनमाली से उनकी ज्यादा जान-पहचन न थी। वह उनके लिए बिलकुल अजनबी था। तो भी उन्होंने सोचा-" दो ही आने तो माँगे हैं। बेचारे को न मालूम कितनी जरूरत है ! न लौटाया तो भी हर्ज नहीं।" यह सोच कर उन्होंने दो आने दे दिए।

लेकिन जब वनमाली ने अपने बादे के मुताबिक दुअन्नी ठीक दूसरे दिन लौटा दी, तो कृपाराम को उस पर विधास हो गया। उसके बाद वनमाली ने कृपाराम से कई बार आठ-दस आने उधार लिए और वादे के मुताबिक समय पर लौटा दिए।

इस तरह कुछ दिन बीत गए और उस गाँव में वनमाली की धाक जम गई। सब लोग कहने लगे- "वनमाली बात का

प्रतुल चन्द्र

पक्का आदमी है। बात का धनी इस जमाने मैं कहाँ मिलता है !"

धाक जमते ही वनमाली जिसमे जब जो कुछ माँगता, लोग तुरन्त खुशी से देने लग गए।

एक दिन वनमाली ने उसी गाँव के गोपाल साव के पास, जो सबसे धनी आदमी माने जाते थे, जाकर कहा- "सावजी ! अचानक मुझे एक दोस्त की शादी में जाना पड़ रहा है। बार वाले मेरे रिश्तेदार हैं। इसलिए कुछ-न-कुछ भेंट ले ही जाना है। मुझे सौ रुपए चाहिए। मैं पाँच दिन में लौटता हूँ। आज मङ्गलवार है। कल शादी होगी। रविवार तक सारा काम खतम हो जाएगा। सोमवार को मैं यहाँ वापस आ जाऊँगा। आते ही आपके रुपए लौटा दूँगा। आपके रुपये लौटा कर ही घर जाऊँगा।"

सावजी बड़े शक्की आदमी थे। लाखों सवाल करके, खूब जानने के बाद ही लोगों को उधार देते थे। उनकी मुट्ठी से एक पाई भी खिसकाना बड़ा मुश्किल था। बनमाली की बात सुन कर मन ही मन सोचने लगे -"यह बनमाली बड़ा



अजीब आदमी मालूम पड़ता है। यह काम-धाम तो कुछ करता नहीं। इनके पास जमीन-जायदाद भी कुछ नहीं है। फिर यह पेट कैसे पालता है किसी को कुछ मालूम नहीं होता। गाँव में हमेशा वह निठल्ला घूमता रहता है। मालूम होता है, उधार लेकर मौज करना ही इसका पेशा है। कहता है, कल शादी में जाना है। कहता है, शादी में कुछ भेंट ले जाएगा। सौ रुपए मुझसे उधार लेकर यों खर्च कर देगा। फिर कहता है, शादी होते ही यहाँ लौटेगा और लौटते ही मेरा रुपया मुझे लौटा कर ही घर जाएगा ! और भी अजीब बात यह जान पड़ती है कि



शादी में खर्च करने के लिए तो रूपए उधार ले जा रहा है। फिर वहाँ से लौटते ही रुपये तुरन्त कैसे लौटा देगा! इतने में इसके पास रुपये कहाँ से आ जायेंगे ? अगर रुपए इसके घर में हैं, तो फिर मुझसे उधार क्यों माँगता है !" इस तरह सावजी अपने मन मैं तर्क-बितर्क करने लगे। आखिर जाने क्या सोचकर वे अन्दर गए और रुपये लाकर बनमाली के हाथ में रख दिए। बनमाली को बड़ी खुशी हुई। खास कर सावजी जैसे शक्की आदमी से रुपया लेना कोई मामूली बात नहीं थी। यह उसकी एक सफलता थी। वनमाली शादी में गया या नहीं, यह किसी को मालूम नहीं। हमें यह जानने की जरूरत भी नहीं। हमारे लिए तो इतना ही काफी है कि सोमवार को सवेरे ही यानी अपने वादे के दिन, वादे के मुताबिक समय पर बनमाली सावजी के घर आया।

उसे देख कर सावजी को बड़ा अचरज हुआ। उन्होंने कभी न सोचा था कि बनमाली अपनी बात का इतना पक्का निकलेगा। इसलिए उन्होंने बहुत खुश हो कर कहा-"क्यों बनमाली। तुम शादी से हो आए ? कोई दिक्कत तो नहीं हुई? वर के लिए तुम क्या-क्या भेंट ले गए ?" सबजी ने बड़ी उत्सुक्ता से उससे अनेक सवाल किए।

बनमाली ने अपने हाथों दी हुई भेंटों का वर्णन करके व्याह का सारा बृतान्त सुनाया और कहा-"लीजिए ! सावजी ! ये हैं आपके रुपये। आपको सैकड़ों धन्यवाद ! आपने मुँह खोलते ही मुझे सौ रुपये दे दिए।"

बनमाली के जाते ही सावजी ने रुपयों की जाँच शुरू की। दरअसल सावजी ने एक चाल चली थी जिसका इल्म बनमाली को कटाई न था। उन्होंने उन रुपयों पर कुछ निशान बना दिए थे जिसे बाद में पहचाना जा सके। अब जब उन्होंने बनमाली के लौटाए रुपयों को परखा तो पाया कि वे वही रोकड़े थे जो सावजी ने बनमाली को दिए थे। इसका मतलब ये हुआ कि बनमाली ने झूट बोला था। उसने कोई भेंट उन रुपयों से नहीं खरीदा था। असल में उसने सावजी के रुपये ज्यों के त्यों लौटा दिए थे। सावजी को समझ आ गया कि खेल क्या है।

सावजी ने गाँव के सारे लोगों को इकट्ठा किया और सारा माजरा कह सुनाया और कहा - "अब आप लोगों को समझ में आ गया होगा कि बनमाली ने

मुझे पाँच दिन बाद मेरे ही रुपए लाकर लौटा दिए।

इससे पता चलता है कि यह इतने दिनों से यही खेल करता आ रहा था। बहुत लोगों से रुपए उधार लेना था और उनके रुपए फिर उन्हीं को लौटा देता था। इसलिए सब लोग इसे 'बात का बड़ा पक्का है' कह कर इसकी इज्जत करते थे। लेकिन कोई इसका मेद अब तक न जान सका। अब प्रश्न यह चटता है कि इसने ऐसा क्यों किया !

इसका एक ही कारण हो सकता है। इसने कृपाराम जी से एक दुअन्नी उधार लेकर यह कुचक्र रचा और उसके जरिए इसने लोगों का विश्वास पात्र बन कर अपनी साख बढ़ाई। फिर सौ रुपए तक उधार लिया। इस तरह धीरे धीरे यह और भी विश्वास बढ़ता जाएगा और एक ही बार में सबों की लुटिया डुबो कर चम्पत हो जाएगा।

यही इसका उद्देश्य था। आप सबने उस पर पूरा विश्वास कर लिया और उसने जितना माँगा, उधार दिया। आज अगर मैंने उसकी परीक्षा न की होती तो उसकी पोल कभी न खुलती। जो हो गया, सो हो गया। अब से इस महात्मा से साबधान रहिए।" सावजी ने सबको चेताया।

इस तरह बनमाली की पूरी कहानी सुन कर लोगों ने सोचा-"तो बनमाली बात का पक्का नहीं। वह तो भारी चकमेवाज है। अरे! हम इतने अन्धकार में थे ! अब ऐसे लोगों पर कभी विश्वास न करना चाहिए।" यह सोच कर उन लोगों ने निश्चय कर लिया कि अब कमी इसको उधार न देंगे। इतना ही नहीं, उन्होंने सोचा कि बनमाली को अच्छा सबक पढ़ाना चाहिए। लेकिन वनमाली वहाँ था कहाँ। वह तो ऐसा लापता हो गया कि फिर किसी को कहीं दिखाई नहीं दिया।





रामपुर में एक घर के चबूतरे पर बैठा हुआ रामू नाम का लड़का अपनी तीसरे दर्जे की पोथी निकाल कर पढ़ रहा था। वह जो सबक पढ़ रहा था वह सियार पर था। रामू जोर से पढ़ रहा था-"सियार बड़ा चालबाज होता है।"

इतने में नजदीक के खेत में से गुजरते हुए एक सियार ने यह वाक्य सुन लिया। उसकी चालाकी के बारे में किताबों में भी लिखा गया है; यह जान कर वह सियार गर्व से फूल उठा। हाँ, तो उसी समय उस ओर से एक केकड़ा भी आ रहा था। जानते ही हो, केकड़ा तो टेढ़ी टेढ़ी चलता है। इस केंकड़े ने सिवार को देख कर कहा-"सियार मामू ! बात क्या है ! बहुत खुश दिखाई देते हो" "अरे केकड़े! क्या सुनाऊँ ! वह लड़का जो चबूतरे पर बैठा पढ़ रहा है न! क्या तुमने उसको पढ़ते नहीं सुना ? वह मेरे ही बारे में सबक पढ़ रहा था। देखो न, मनुष्य अपनी किताबों में भी लिख लिया है कि मैं बढ़ा चालाक जानवर हूँ।" यह कह कर सियार ने गर्व के साथ एक बार अपनी दुम फटकारी। "मैंने इसे बड़े प्रेम से सियार मामू कह कर पुकारा। लेकिन इसने मुझे पुकारा 'अरे फेंकड़े !' कह कर ! क्या मनुष्य की प्रशंसा सुन कर इसे इतना गर्व हो गया है ? में इसका सारा गर्व छुड़ाऊँगा।" केकड़े ने अपने मन में सोचा और सियार से कहा-"सियार मामू ! चालबाज के माने तो हुआ कपटी। धोखेबाज ! यह तो निन्दा है । यह प्रशंसा कैसे हो गई ? यह सुन कर सियार को गुस्सा आ गया। उसने कहा-"केकड़े ! तू मुझे देख कर कितना जलता है ! गलत अर्थ लगा कर क्या तू मेरी प्रशंसा को निन्दा बनाना चाहता है !" "मामू, तुम बड़े होशियार हो, इसमें कोई शक



नहीं। लेकिन दुनिया में कुछ लोग ऐसे भी हैं जो तुमसे भी होशियार हैं।" केंकड़े ने मुस्कुराते हुए कहा। यह सुन कर सियार का गुस्सा और भी बढ़ गया और उसने कहा-"क्या कहा तूने ! क्या दुनियाँ में मुझसे भी होशियार लोग हैं!" "क्यों नहीं है! मैं खुद तुमसे होशियार हूँ।" केकड़े ने जवाब दिया। "अरे! तू तो सीधा चल भी नहीं सकता। टेढ़ा-मेढा चलता है। तू मुझसे ज्यादा होशियार क्या बनेगा ?"" सियार ने कहा। तब केकडे ने अपनी हँसी दवा कर सियार की बात काट कर कहा-"मामू! अगर हम सीधे चलने लगे तो फिर कौन हमारी बराबरी कर सकेगा !" "शेखी मत बधारो।" सियार ने कहा। "मैं शेखी नहीं बधारता। अगर तुम चाहो तो बाजी लगाओ। तब मालूम हो जाएगा कि हम दोनों में कौन तेज चलता है।" केकड़े ने कहा।

उसकी ये बातें सुन कर सियार को बड़ा अचरज हुआ। फिर भी उसने कहा-"अच्छा ! चलो, हम दोनों खेत के इस पार से उस पार तक दौड़ लगाएँ। देखें, कौन जीतता है ?" केकड़े ने उसकी चुनौती मञ्जूर कर ली। दोनों दौड़ने के लिये तैयार हो गए। "दोनों को एक ही लकीर पर खड़ा हो जाना चाहिये।" सियार ने कहा। "कोई जरूरत नहीं। मैं तुमसे तेज दौड़ता हूँ। इसलिए मैं जरा पीछे भी खड़ा हो गया तो नुकसान न होगा।" यह कह कर केकड़ा सियार के पीछे खड़ा हो गया। "हम दोनों में कौन जीता ! इसका निश्श्रय कैसे होगा ? इसके लिए एक पञ्च चाहिये न!" सियार ने कहा। उसी समय एक कौआ उधर से उड़ता आया। केकड़े ने उसे पुकार कर कहा-"कौआ काका! जरा इस खेत के उस पार जाकर बैठ जाओ और

हम दोनों की दौड़ देखो। हम दोनों में कौन यहाँ पहले पहुँचता है, यह तुम्हें बताना होगा।" कौए ने उसकी बात मान ली और खेत के उस पार जाकर बैठ गया। सियार ने एक, दो, तीन गिन कर दौड़ लगाई। लेकिन केफड़ा खड़ा रहा और सियार के तीन कहते ही उसने लपक कर उसकी पूँछ पकड़ ली। इस तरह उसे दौड़ने की जरूरत ही न रही। सियार पल भर में कौए के पास पहुँच कर पीछे मुड़ा और पुकारने लगा-"अरे केकड़े ! कहाँ है तू ! कितनी दूर रह गया ? इस तरह खिल्ली उड़ाते हुए वह देखने चला कि कैंकड़ा कहाँ है ! इतने में केकड़ा उसकी पूँछ छोड़ कर उछला और एक सलाम बजा कर कौए के पास जा खड़ा हुआ। उसने सियार से कहा-"सियार मामू ! पीछे क्या देख रहे हो! मैं तो तुमसे पहले ही यहाँ पहुँच गया और कब से तुम्हारी राह देख रहा हूँ।"

सियार अचरज के साथ कौए की तरफ मूड़ा तो केकड़े को देख कर हक्का-वक्का रह गया। वह क्या कर सकता था ! आखिर उसने कहा-



'केकड़े भाई। तुम्हीं जीत गये।" "हाँ, दूसरों की खातिर करना सीख लो। घमण्ड में आकर यह न सोचो कि मुझसे बड़ा कोई है ही नहीं। दुनियाँ में घमण्ड किसी के काम नहीं आता।" केकड़े ने सियार को उपदेश दिया। सियार शर्मिन्दा हुआ और दुम दबा कर वहाँ से खिसक गया। कौए ने केकड़े से सारी कहानी सुन ली और कहा-"हाँ, भैया! इसी सियार ने एक बार गाना सुनने के बहाने मुझे चकमा दिया और मेरा गोश्त का टुकड़ा उठा कर भाग गया। तुमने इसे अच्छा सबक सिखाया। नहीं तो इसके घमण्ड का कोई ठिकाना न था। यह कह कर वह भी अपनी राह चला गया।

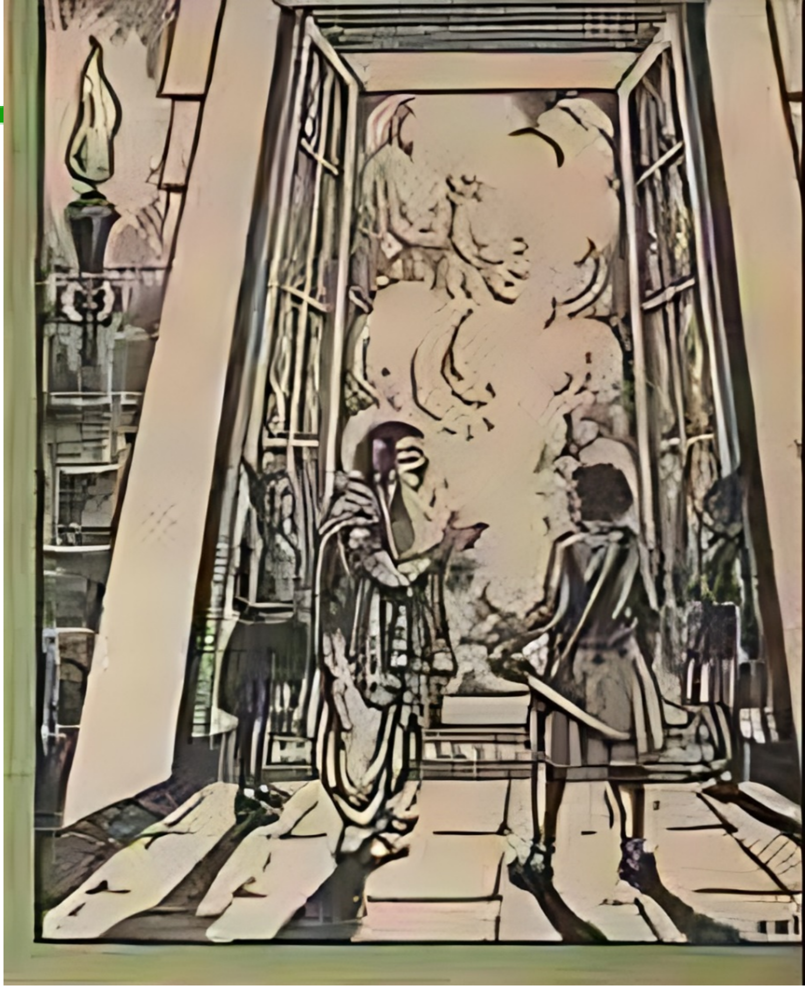


सात समुद्र के पार एक द्वीप था। उस द्वीप के बीचों-बीच एक किला बना हुआ था। उस किले की बगल में एक बगीचा था और उस बगीचे के बीच में या एक सुन्दर महल। महल के चारों ओर सात खाइयाँ थी जिनको पार करना मनुष्य मात्र के लिए सम्भव नहीं था। उस महल में रहती थी राजा दिलीपसिंह की लड़की। यह बहुत सुन्दरी थी। उसने एक प्रण कर लिया था कि जो सात समुन्दर और सातों खाइयों पार कर उसके महल में आएगा, उसी के साथ वह ब्याह करेगी। उसके रूप से लुब्ध होकर देश-विदेश के कितने ही राजकुमार आए। लेकिन कोई उन खाइयों को पार नहीं कर सके। उनमें से एक राजकुमार का नाम था 'कलाघर'। यह कुन्तल देश का रहने चाला था। वह काठ की मूर्तियों बनाने में बड़ा निपुण था। कलाधर एक बड़े जहाज पर चढ़ कर रवाना हुआ। लेकिन बीच में तूफान उठा तो राजकुमार ने अपने जहाज को एक द्वीप के किनारे लगा दिया। जहाज पर बैठे-बैठे जब उसका जी उबने लगा तो वह काठ के तोते बनाने लगा। उसने करीब सौ तोते बनाए और उन्हें सुन्दर रङ्गों में रङ्ग दिया। इतने में तूफान छूट गया। राजकुमार अपने सौ तोतों को लेकर जहाज पर चढ़ा और लङ्गर उठा लिया। लहरों पर झूलता जहाज आगे बढ़ा। उसी समय ब्रम्हाजी आकाश मार्ग से कहीं जा रहे थे। समुन्दर के बीच जहाज पर अकेले सफर करते हुए कलाघर को देख कर उन्हें बड़ा अचरज हुआ। उसके पास काठ के सौ तोतों को देख कर उन्होंने सोचा-"अहा ! कितने सुन्दर तोते बनाए हैं ! देखने से मालूम होता है कि अभी

फूलचन्द

उड़ने को तैयार हैं! क्या में इनमें जान डाल दूँ !" यह सोच कर उन्होंने उनमें जान डाल दी। बस, कलाधर के सौ तोते पंख फड़फड़ा कर उड़ गये। तोतों को यों उड़ते देख कर कलावर को अचरज भी हुआ और साथ साथ मारी दुख भी। किसी तरह अनेक कष्ट उठा कर उसने छः समुन्दर पार कर लिए।

सातवें समुन्दर में जाते ही और एक तूफान उठा और उसका जहाज टुकड़े टुकड़े हो गया। लेकिन कलाधर किसी तरह किनारे पहुँच गया। किनारे पहुँचने पर उसने पूछताछ की तो पता चला कि वही नवद्वीप है। वह फूला न समाया। सीधे राजा के दरबार में पहुँचा। कलाधर की सुन्दरता देख कर राजा का मन भी पिघल गया। उसने उसे अपनी लड़की के प्रण की बात बताई। उसने कहा- "अनेक शूर-वीर इसी कोशिश में अपने प्राणों से हाथ धो बैठे हैं। इसलिये सीधे घर लौट जाना ही अच्छा है।"



"लेकिन संसार में कोई ऐसा काम नहीं है जो मैं नहीं कर सकता। मैं अपनी सामर्थ्य जानता हूँ।" कलाधर ने कहा। तब किले के द्वारपाल ने फाटक खोल कर उसे अन्दर जाने दिया। अन्दर सारी जगह निर्जन थी। थोड़ी दूर पर एक खाई थी जिसमें कुछ नहीं था। साहसी कलावर ने उसे आसानी से पार कर लिया। थोड़ी दूर जाने पर उसी तरह की और एक खाई मिली। इसमें दहकते हुए अङ्गारे भरे थे। लेकिन कलाभर ने इसे भी पार कर लिया। तीसरी खाई में पानी भरा था और प्रबाह बड़ा तेज था।



कलाधर ने छलाँग मार कर पार जाना चाहा; लेकिन वह बीच खाई में ही गिर पड़ा। उस खाई की दीवारें बहुत चिकनी थीं। इसलिए उसे कहीं कोई सहारा नहीं मिल रहा था। बेचारा ऊपर नहीं आ सकता था। लाचार होकर वह उसी तरह पानी पर तैरता रहा। थोड़ी देर बाद वह इतना थक गया कि हाथ-पैर ढीले पड़ गए। इतने में बहुत से तोते उड़ते हुए आए और उन्होंने एक डाल तोड़ कर पानी में गिरा दी। कलाधर उस डाल पर आराम से बैठ गया और डूबने से बच गया।

फिर वही तोते एक रस्सी ले आये। उस रस्सी का एक छोर उन्होंने किनारे के पेड़ से बाँध दिया और दूसरा छोर खाई में छोड़ दिया। बस ! रस्सी पकड़ कर कलाधर किनारे आ गया। वहाँ उसकी भूख मिटाने के लिए अच्छे-अच्छे फल पड़े थे। थोड़ी देर आराम करने के बाद कलाधर ने उठ कर देखा तो मालूम हुआ कि वे तोते उसी के बनाये हुए काठ के तोते थे और वह रस्सी उसी के जहाज की रस्सी थी। इतने में देखते ही देखते तोते उड़ गए। अपने भाग्य को सराहता हुआ कलाधर आगे बढ़ चला। आगे जो खाइयाँ थीं वे एक से एक भयानक थीं। चौथी खाई में भयङ्कर साँप थे। वे फुफकार छोड़ते जहर उगल रहे थे। कलाधर ने इसे भी पार कर लिया। पाँचवी खाई में भूखे शेर और तरह तरह के जङ्गली जानवर गरज रहे थे। कलाधर ने साहस के साथ उसे भी पार कर लिया। छठी खाई में मनुष्य-भक्षी मगर और भयङ्कर जलचर मुँह फाड़े उसकी

राह देख रहे थे। लेकिन किसी तरह उनकी बला भी टल गई। इस तरह उसने छः खाइयाँ पार कर ली और एक ही बच रही थी। इसे भी पार कर लेने पर वह सीधे महल में पहुँच जाता और राजकुमारी उसे मिल जाती। "मैंने छ: खाइयाँ तो पार कर ली। अब सातवीं खाई पार करने में कितनी देर लगती है ! " यह सोच कर कलाधर हिम्मत से आगे बढ़ गया।



आखिर सातवीं खाई भी दिखाई दी। उस खाई में पैनी बरछियाँ गड़ी हुई थीं। कलाधर ने सोचा-"यह तो आसानी से पार कर जाऊँगा।" यह सोच कर उसने छलाँग मारी। लेकिन पैर फिसल गया और वह खाई में जा गिरा। फिर तो बरछियों से छिद कर जान छोड़ने में ज्यादा देर न लगी। तब तक कलाधर को वहाँ आए सात दिन हो गये थे। राजा ने सोचा-"जरा जाकर देखें, उसकी क्या हालत है !" सातवीं खाई के पास जाकर राजा ने देखा कि कलाधर की लाश उसमें पड़ी है और बहुत से तोते शोक से उसके ऊपर मण्डरा रहे हैं। यह देख कर राजा को बहुत दुख हुआ। उसने सोचा-"इन मासूम तोतों के हृदय में जितनी दया है, उतनी मेरी लड़की के हृदय में नहीं। उसी के कारण तो इस राजकुमार की जान गई! अब आगे से ऐसा नहीं होने देना चाहिए। या तो वह अपना प्रण तोड़ेगी या मैं उसका वध करूँगा।" यह सोच कर गुस्से से भरा हुआ राजा सीधे अपनी उड़की के पास गया और बोला-"तू नहीं जानती कि तेरे कारण कितने लोग अपनी जान से हाथ

धो बैठे हैं! या तो आज से तू अपना प्रण छोड़ या अपने प्राणों से हाथ धो ले। यहाँ आ, तेरे हठ के कारण कितना सुन्दर राजकुमार बलि हो गया है मेरे साथ चल कर देख। यह कह कर वह उसे घसीटता हुआ सातवीं खाई के पास ले गया। वहाँ जाकर राजा ने देखा तो आश्चर्य में पड़ गया। कुछ तोते कलाधर की छाती पर बैठ कर जड़ी-बूटियों का रस उसके मुँह में टपका रहे थे। और कुछ तोते उस रस को सभी घावों पर मल रहे थे; और कुछ तोते अच्छे अच्छे फल अपनी चोंचों में लिये तैयार बैठे थे। इतने में कलाधर हिलने-डुलने लगा। धीरे धीरे उसकी आँखें खुलीं । तब राजकुमारी ने अपने पिता के पैरों पर गिर कर माफी माँगी। राजा की आज्ञा पाकर राज-वैध दौड़े आये। उन्होंने कलाधर की चिकित्सा की। बहुत से नौकर-चाकर आकर सेवा सुश्रूषा करने लगे। थोड़ा सा आराम होते ही राजा उसे किले में ले गया। तोते भी उसके साथ गये।

कुछ दिनों में कलाधर के सभी घाव भर गये। वह पूरी तरह चङ्गा हो गया। तब बड़ी धूम-धाम से राजकुमारी के साथ उसका ब्याह हुआ। प्राण देने वाले उन तोतों के लिए सोने के सौ पिञ्जड़े बनाए गए। राजकुमार ने उन तोतों को पिञ्जड़ों में रखा और उनके लिये सब तरह की सहूलियतें कर दीं। लेकिन जब दूसरे दिन उन पिञ्जड़ों के दरवाजे खोल कर देखा गया तो मालूम हुआ कि उनमें जीते-जागते सोते नहीं, बल्कि उसी के बनाए वे काठ के तोते हैं।



